Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVI, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में प्रकृति-चित्रण

डॉ. ज्योति सिंह* शिवऔतार**

* प्राध्यापक (हिंदी) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (हिंदी) अवधेश प्रताप सिंहविश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में प्रकृति चित्रण इस शोध पत्र का वर्ण्य विषय है। इसकी शोध परक विवेचना करने के पूर्व इसके सार रूप पर संक्षिप्त प्रकाश डालना उचित प्रतीत होता है। केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में प्रकृति चित्रण की यथार्थ परक झांकी देखी जा सकती है। इस शोध लेख में केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में प्रकृति चित्रणकी शोधात्मक विवेचना की गई है। केदारनाथ अग्रवाल प्रगतिशील काव्य-भवन के सुस्पष्ट स्तम्भ हैं। केदार की प्रगतिशीलता अन्यों की प्रगतिशीलता से भिन्न है। उनका अद्भुत प्रकृति-चित्रण उन्हे अन्यों से अलग खडा कर देता है। प्रकृति के चित्रांकन में कवि हैं जो मिलकर रंगारंग हो गये हैं। वास्तव में नियंता की इस सुन्दर सृष्टि में प्रकृति मानव की अमर सहचरी रही है। प्रकृति की गोद में ही पलकर मानव संसार के सौंदर्य का संदर्शन करता है। आदि ग्रन्थ वैदिक साहित्य में प्राप्त प्राकृतिक तत्वों के अत्यधिक वर्णन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि प्रारम्भ से ही प्रकृति से कितना अटूट अनुराग रहा है। आदिकाल से ही प्रकृति ने मानव जीवन को अनेक रूपों में प्रभावित किया है। मानव का अन्तर और वाह्य प्राकृतिक रूप सौंदर्य से अभिभूत रहा है। प्रकृति के संवेदनशील नाना रूपात्मक व गतिशील रूप को देखकर कभी मानव मन विस्मय से तो कभी जिज्ञासा की भावना से भर उठा है। कहने का आशय यह है कि प्रकृति ने आदिकाल से आज तक मानवीय चेतना और साहित्य को अत्यधिक प्रभावित किया है। दूसरों से कुछ अलग हटकर उनके द्वारा उपस्थित किया गया प्रकृति का मनहर सदृश्य, किस रसज्ञ के मन को मुग्ध करनें में समर्थ नही होगा प्रकृति चित्रण के इसी वैशिष्ट्य से अभिभूत होकर मेरे मन में 'केदार काव्य में प्रकृति-चित्रण' शोध-पत्र लिखने की प्रेरणा जगी।

आलम्बन रूप में पंकृति चित्रण-जहाँ कवि प्रकृति को आलम्बन बनाकर विविध प्रकार से प्रकृति वर्णन करता है वहाँ आलम्बन रूप में प्रकृति चित्रण माना जाता है कवि ने 'चन्द्र गहना से लौटती बेर' शीर्षक कविता मे चने के पेड़ का स्वतन्त्र चित्रण कर प्रकृति का आलम्बन रूप दर्शाया है उदाहरण दृष्टव्य है-

'देख आया चन्द्र गहना।
देखता हूँ दृश्य अब मैं
मेड़ पर इस खेत की बैठा अकेला।
एक बीते के बराबर
यह हरा ठिगना चना,
बाँधे मुरैठा शीश पर
छोटे गुलाबी फूल का,
सज कर खड़ा है।'[1]

'प्रात-चित्र कविता' मे कवि ने रवि का आलम्बन रूप में चित्रण किया है-

'रवि-मोर सुनहरा निकाला,
पर खोल सबेरा नाचा,
भू-भारकनक गिरि पिघला,
भूगोल मही का बदला।
नवजात उजेला दौड़ा,
कन-कन बन गया रूपहला।
मधुगीत पवन ने गाया,
संगीत हुई यह धरती,
हर फूल जगा मुसकाराया।'[2]

कवि केदार ने 'खेत का दृश्य' कविता में खेत के दृश्य का वर्णन आलम्बन रूप में किया है। उसको स्वतन्त्र प्रकृति चित्रण के रूप में देखा जा सकता है-

'आसमान की ओढ़नी ओढ़े,
धानी पहने
फसल घँघरिया,
राधा बन कर धरती नाची,
नाचा हँसमुख
कृषक सँवरिया।
माती थाप हवा की पड़ती,
पेडों की बज
रहीढुलकिया
जी भर फाग पखेरू गाते,
ढरकी रस की
राग-गगरिया।'[3]

'वंसत' नामक कविता में कवि ने वंसन्त का आलम्बन रूप में चित्रण कर आलम्बन रूप को प्रदर्शित किया है उदाहरण दृष्टव्य है

हिम से हत संकुचित प्रकृति अब फूली
रूप-राग-रस गंध-भार भर झूली
रंगो से अभिभूत हुई चट्टानें
जड़ता में जागीं जीवन की ताने

नभ में भी आलोक–नील गहराया
सागर ने संगीत तरंगित गाया
आठ रूप शिव के, समाधि को त्यागे
मृण्मय अवनी के अंगो में जागे
वासंतिक वैभव यौवन पर आया
हरा–भरा संसार खिला मुसकाया।'[4]

कवि केदार को प्रकृति से अतिशय अनुराग है। कोयल की मधुर ध्वनि से कवि का हृदय–प्रसून प्रस्फुटित हो उठता है। उसकी जिजिविषा जाग उठती है।

कोयल कुहुकी
फिर फिर कुहुकी
रह–रह कर फिर फिर कुहुकेगी
बिन कुहुके वह नही रहेगी
चाहे जितना उत्तपित हो
आतप से वह संतापित हो।'[5]

'फूल नहीं रंग बोलते हैं' काव्य संग्रह में कवि ने चिडिया का आलम्बन रूप में चित्रण किया है।

'वह चिड़िया जो
चोंच मार कर
दूध–भरे जुण्डी के दाने
रूचि से रस से खा लेती है
वह छोटी संतोषी चिड़िया
नीले पंखो वाली मै हूँ
मुझे अन्न से बहुत प्यार है।'[6]

जहाँ प्रकृति मानवीय भावनाओं को उद्दीप्त हुई अंकित की जाती है वहाँ प्रकृति चित्रण उद्दीपन के रूप में कहा जाता है। कवि संयोग और वियोग दोनो ही अवसरों पर भावों को उद्दीप्त करने के लिए प्रकृति का प्रयोग करता है कवि केदार ने भी प्रकृति के उद्दीपन रूप की अत्यन्त चित्तकर्षक झाकियाँ प्रस्तुत की है सुग्गे और सारस का स्वर कवि की प्रेम भावना को उद्दीप्त करते है।

'सुन पड़ता है
मीठा–मीठा रस टपकता
सुग्गे का स्वर
टें टें टें टें,
सुन पड़ता है
वनस्थली का हृदय चीरता,
उठता गिरता,
सारस का स्वर
टिरटो टिरटों
मन होता है
उड़ जाऊँ मैं
पर फैलाये सारस के संग
जहाँ जुगुल जोड़ी रहती है
हरे खेत में,
सच्ची प्रेम कहानी सुन लूँ
चुप्पे–चुप्पे।'[7]

जैसे ही धूप आती है कवि को लगता है उसकी प्रेयसी आई है। कवि ने धूप का उद्दीपन रूप में चित्रण किया है–

'हे मेरी तुम
आज धूप जैसे आई
और दुपट्टा
उसने मेरी छत पर रक्खा
मैंने समझा तुम आयी हो।
दौडा मैंने तुमसे मिलने को
लेकिन मैंने तुम्हे न देखा
बार–बार आंखो से खोजा
वही दुपट्टा मैंने देखा
अपनी छत के ऊपर रक्खा।'[8]

कवि केदार नाथ अग्रवाल को प्रकृति नारी के रूप में ही सर्वाधिक दिखती है। कवि कभी तो प्रकृति पर कल्पना के अनेक रंग छिड़कता है और कभी निस्पन्द दृष्टि से निहारता है। नारी को प्रकृति का उपादान मानकर उसका जमकर चित्रण किया है प्रकृति को वे प्रिया मानते हैं और वे इसी प्रिया से प्रेरणा लेकर काव्य–सृजन हेतु समर्पित हुए–

'कविता यों ही बन जाती है
बिना बनाये
क्योंकि हृदय में तड़प रही है
याद तुम्हारी।'[9]

कवि खेत की मेड़ पर अकेले बैठा है और अलसी का नारी रूप उद्घाटित करते हुए कहता है कि चने के पेड़ के पास ही हठीली अलसी भी उगी है जो देह की पतली और कमर की लचीली है, वह सिर पर नीले फूले चढाकर मानो यह कह रही है कि जो मुझे छुयेगा उसे मै हृदय का दान दूँगी इसी प्रकार उन्होने सरसों का भी बड़ा मोहक नारी रूप प्रस्तुत किया है। प्रकृति के ये नारी रूप इन पंक्तियों में द्रष्टव्य हैं–

'पास ही मिल कर उगी है
बीच में असली हठीली
देह की पतली, कमर की है लचीली,
नीले फूल को सिर पर चढ़ा कर
कह रही है, जो हुये यह
दूँ हृदय का दान उसको।
और सरसों की न पूछों–
हो गयी सबसे सयानी,
हाथ पीले कर लिये है
व्याह–मंडप में पधारी।'[10]

केदार नाथ अग्रवाल जी का प्रकृति–चित्रण प्रगतिवादी तेवर को लिए छायावादी कवियों से भिन्न है उनके प्रकृति निरूपण में यथार्थता एवं ग्रामीण परिवेश का सम्पूर्ण चित्रण मिलता है। 'खेत का दृश्य' नामक कविता में फसल और धरती को नारी रूप में चित्रित करती हुयी ये पक्तियाँ देखी जा सकती है–

'आसमान की ओढ़नी ओढ़े
धानी पहने
फसल धँधरिया,
राधा बन कर धरती नाची,
नाचा हँसमुख

कृषक सँवरिया।'[11]

कवि को तो पैरों से लिपिटी हुयी धूल गाँव की गोरी जैसी लगती है जो उपेक्षित होकर नीचे पड़ी हुयी है और जिसे इस अनुपयुक्त ठौर से किसी ने भी नही उठाया। यहाँ धूल का नारी रूप प्रदर्शित है

'लिपट गयी तो धूल पाँव से
वह गोरी है इसी गांव की
जिसे उठाया नही किसी ने
इस कुठाव से।'[12]

कवि ने धूप नामक कविता में धूप को नारी रूप में चित्रित किया है चाँदी की साड़ी पहने धूप चमकती है। वह मायके में आई बेटी की तरह प्रसन्न है। इस कविता में कवि ने सरसों को भी नारी रूप में रूपायित किया है।

'धूप चमकती है चाँदी की साड़ी पहने
मैके में आयी बेटी की तरह मगन है
फूली सरसों की छाती से लिपट गयी है
जैसे दो हमजोली सखियाँ गले मिली हैं।'[13]

निष्कर्ष – इस प्रकार निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में प्रकृति चित्रण, अत्यंत विकसित है। केदार नाथ अग्रवाल का प्रकृति से अटूट सम्बन्ध और अपरिमित प्रेम है इसलिए कवि ने हर तेवर से प्रकृति को ग्रहण किया है और प्रकृति के अवलम्बन से केदार ने उत्कृष्ट काव्य सृजन करके समाज को समर्पित किया।कवि के अद्भुत प्रकृति चित्रण पर उनके विद्वान सर्जक विमुग्ध हुए। कतिपय कविमनीषियों द्वारा केदार के प्रकृति प्रेम पर की गयी महत्वपूर्ण टिप्पणियों का यहाँ उल्लेख करना भी समीचीन है। प्रकृति के सुकुमार कवि सुमित्रानन्दन पन्त अपने अभिमत में कहते हैं। केदार हृदय के सहज कवि हैं। अपनी कविताओं में वे निरन्तर सहजता की रक्षा कर सके हैं किन्तु वे मात्र सरल कवि नही है, गूढ़ भी है। अपने काव्य में उन्होने नदी संवेदनाओं को वाणी दी है। उनकी प्रकृति सम्बन्धी कविताओं में भी जीवन के प्रति एक गहरा ममत्व प्राप्त होता है। इस प्रकार उक्त शोधपत्र की शोधात्मक विवेचना से यह स्पष्ट हो जाता है कि केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में प्रकृति चित्रण की चेतनाएँ विद्यमान हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. फूल नही रंग बोलते है – केदार नाथ अग्रवाल, प्र0सं0–02, परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, सन्–1965
2. फूल नही रंग बोलते है – केदार नाथ अग्रवाल, प्र0सं0–30, परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, सन्–1965
3. फूल नही रंग बोलते है – केदार नाथ अग्रवाल, प्र0सं0–31, परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, सन्–1965
4. फूल नही रंग बोलते है – केदार नाथ अग्रवाल, प्र0सं0–37, परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, सन्–1965
5. बोले बोल अबोल–केदार नाथ अग्रवाल, प्र0सं0–127, परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, सन्–1985
6. फूल नही रंग बोलते है – केदार नाथ अग्रवाल, प्र0सं0–101, परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, सन्–1965
7. फूल नही रंग बोलते है – केदार नाथ अग्रवाल, प्र0सं0–19, परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, सन्–1965
8. फूल नही रंग बोलते है – केदार नाथ अग्रवाल, प्र0सं0–52, परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, सन्–1965
9. समीक्षाएँ एवं मूल्यांकन–रामचद्र मालवीय, प्र0सं0–47,48 शब्दपीठ मालवीय, सन्–1980
10. फूल नही रंग बोलते है– केदार नाथ अग्रवाल, प्र0सं0–17, परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, सन्–1965
11. फूल नही रंग बोलते है – केदार नाथ अग्रवाल, प्र0सं0–31, परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, सन्–1965
12. फूल नही रंग बोलते है– केदार नाथ अग्रवाल, प्र0सं0–49, परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, सन्–1965
13. फूल नही रंग बोलते है– केदार नाथ अग्रवाल, प्र0सं0–63, परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, सन्–1965

****